**ओ३म्**

**‘स्वामी शंकराचार्य जी के जैन मत के आचार्यों से शास्त्रार्थ के**

**इतिहास का ऋषि दयानन्द द्वारा खोजपूर्ण वर्णन’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

लगभग 23-24 सौ वर्ष पूर्व सनातन धर्म लुप्त प्रायः होकर देश में सर्वत्र नास्तिक मत छा गया था। इस अवधि में देश में स्वामी शंकराचार्य जी का प्रादुर्भाव होता है। वह वेद विद्या से सम्पन्न थे। उन्होंने जैनमत के आचार्यों से उनकी मिथ्या मान्यताओं और वैदिक मत की सत्य मान्यताओं पर शास्त्रार्थ कर उन्हें पराजित किया था और पुनः वैदिक धर्म की स्थापना की थी। इन सभी घटनाओं का ऐतिहासिक वर्णन वेदों के अपूर्व ऋषि व विद्वान् एवं आर्यसमाज के संस्थापक ऋषि दयानन्द ने अपने अमर कालजंयी ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में किया है। आज हम उनके उसी ग्रन्थ से उनके विचारों से अपने प्रिय पाठकों को अवगत करा रहे हैं। इस वर्णन से आस्तिक वैदिक मत की महत्ता विदित होने के साथ नास्तिक मत की निस्सारता का ज्ञान होगा। इसे जानना अतीव आवश्यक है जिससे कि अविद्या में फंसने से बचा जा सके और सुविज्ञ पाठक अपना सत्य मत रखकर अन्य लोगों का आवश्यकता पड़ने पर उचित समाधान कर सकें। शंकराचार्य जी और जैनियों का जो शास्त्रार्थ हुआ, उसका महर्षि दयानन्द के शब्दों में वर्णन प्रस्तुत करते हैं।

महर्षि दयानन्द सन् 1883 में अपने सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ के ग्यारहवें समुल्लास में लिखते हैं कि बाईस सौ वर्ष हुए कि एक शंकराचार्य द्रविड देशोत्पन्न ब्राह्मण ब्रह्मचर्य से व्याकरणादि सब शास्त्रों को पढ़कर सोचने लगे कि अहह ! सत्य आस्तिक वेद मत का छूटना और जैन नास्तिक मत का चलना बड़ी हानि की बात हुई है। इन को किसी प्रकार हटाना चाहिये। शंकराचार्य शास्त्र तो पढ़े ही थे परन्तु जैन मत की भी पुस्तकें पढ़े थे और उन की युक्ति भी बहुत प्रबल थी। उन्होंने विचारा कि इन को किस प्रकार हटावें? निश्चय हुआ कि उपदेश और शास्त्रार्थ करने से ये लोग हटेंगे। ऐसा विचार कर उज्जैन नगरी में आये। वहां उस समय सुधन्वा राजा था, जो जैनियों के ग्रन्थ और कुछ संस्कृत भी पढ़ा था। यहां जाकर वेद का उपदेश करने लगे और राजा से मिल कर कहा कि आप संस्कृत और जैनियों के भी ग्रन्थों को पढ़े हो और जैन मत को मानते हो, इसलिये आपको मैं कहता हूं कि जैनियों के पण्डितों के साथ मेरा शास्त्रार्थ कराइये। इस प्रतिज्ञा पर, जो हारे सो जीतने वाले का मत स्वीकार कर ले और आप भी जीतने वाले का मत स्वीकार कीजियेगा।

 यद्यपि सुधन्वा जैन मत में थे तथापि संस्कृत ग्रन्थ पढ़ने से उन की बुद्धि में कुछ विद्या का प्रकाश था। इस (संस्कृत विद्या) से उन के मन में अत्यन्त पशुता नहीं छाई थी। क्योंकि जो विद्वान् होता है वह सत्यासत्य की परीक्षा करके सत्य का ग्रहण और असत्य को छोड़ देता है। जब तक सुधन्वा राजा को बड़ा विद्वान् उपदेशक नहीं मिला था तब तक वह सन्देह में थे कि इन में कौन सा सत्य और कौन सा असत्य है? जब शंकराचार्य की यह बात सुनी तो वह बड़ी प्रसन्नता के साथ बोले कि हम शास्त्रार्थ कराके सत्यासत्य का निर्णय अवश्य करावेंगे। उन्होंने जैनियों के पण्डितों को दूर-दूर से बुलाकर सभा कराई।

 उसमें शंकराचार्य का वेदमत और जैनियों का वेदविरुद्ध मत था अर्थात् शंकराचार्य का पक्ष वेदमत का स्थापन और जैनियों का खण्डन और जैनियों का पक्ष अपने मत का स्थापन और वेद का खण्डन था। शास्त्रार्थ कई दिनों तक हुआ। जैनियों का मत यह था कि सृष्टि का कर्ता अनादि ईश्वर कोई नहीं। यह जगत् और जीव अनादि हैं। इन दोनों की उत्पत्ति और नाश कभी नहीं होता। इस से विरुद्ध शंकराचार्य का मत था कि अनादि सिद्ध परमात्मा ही जगत् का कर्ता है। यह जगत् और जीव झूठा है क्योंकि उस परमेश्वर ने अपनी माया से जगत् बनाया, वही धारण और प्रलय कर्ता है। और यह जीव और प्रपंच स्वप्नवत् है। परमेश्वर आप ही सब (जगत व जीव) रूप होकर लीला कर रहा है।

 बहुत दिन तक शास्त्रार्थ होता रहा। परन्तु अन्त में युक्ति और प्रमाण से जैनियों का मत खण्डित और शंकराचार्य का मत अखण्डित रहा। तब उन जैनियों के पण्डित और सुधन्वा राजा ने वेद मत को स्वीकार कर लिया, जैनमत को छोड़ दिया। पुनः बड़़ा हल्ला गुल्ला हुआ और सुधन्वा राजा ने अपने अन्य इष्ट मित्र राजाओं को लिखकर शंकराचार्य से शास्त्रार्थ कराया। परन्तु जैन मत का पराजय समय होने से पराजित होते गये।

 पश्चात् शंकराचार्य के सर्वत्र आर्यावर्त देश में घूमने का प्रबन्ध सुधन्वादि राजाओं ने कर दिया और उन की रक्षा के लिये साथ में नौकर चाकर भी रख दिये। उसी समय से सब के यज्ञोपवीत होने लगे ओर वेदों का पठन-पाठन भी चला। दस वर्ष के भीतर सर्वत्र आर्यावर्त्त देश में घूम कर जैनियों का खण्डन और वेदों का मण्डन किया। परन्तु शंकराचार्य के समय में जैन मत विध्वंस, अर्थात् जितनी मूर्तियां जैनियों की निकलती हैं, वे शंकराचार्य के समय में टूटी थीं और जो बिना टूटी निकलती हैं वे जैनियों ने भूमि में गाड़ दी थी कि तोड़ी न जायें। ये अब तक कहीं कहीं भूमि में से निकलती हैं।

 शंकराचार्य के पूर्व शैवमत भी थोड़ा सा प्रचरित था, उस का भी (स्वामी शंकराचार्य जी ने) खण्डन किया। वाममार्ग का खण्डन किया। उस समय इस देश में धन बहुत था और स्वदेशभक्ति भी थी। जैनियों के मन्दिर शंकराचार्य और सुधन्वा राजा ने नहीं तुड़वाये थे क्योंकि उन में वेदादि की पाठशाला (स्थापित) करने की इच्छा थी। जब वेदमत का स्थापन हो चुका और विद्या प्रचार करने का विचार करते ही थे, उतने में दो जैन ऊपर से कथन मात्र वेदमत और भीतर से कट्टर जैन अर्थात् कपटमुनि थे, शंकराचार्य उन पर अति प्रसन्न थे, उन दोनों ने अवसर पाकर शंकराचार्य को ऐसी विषयुक्त वस्तु खिलाई कि उन की क्षुधा मन्द हो गई। पश्चात् शरीर में फोड़े फुन्सी होकर छः महीने के भीतर शरीर टूट गया। तब सब निरुत्साही हो गये और जो विद्या का प्रचार होने वाला था, वह भी न होने पाया। (यह ऐसा ही था जैसा कि ऋषि दयानन्द जी की विरोधियों द्वारा विषपान से मृत्यु से हुआ था।)

 यह कितने आश्चर्य की बात है कि जो जैनमत वा उसके आचार्य अपने मत की सत्यता सिद्ध नहीं कर सके और स्वामी शंकराचार्य जी से पराजित हुए, शास्त्रार्थ के नियमों के अनुसार जिन्होंने वैदिक धर्म स्वीकार कर लिया था, वही कालान्तर में अवसर मिलने पर पुनः अपनी पुरानी अविद्या, मूर्तिपूजा सहित ईश्वर के अस्तित्व व ईश्वरीय ज्ञान वेद में विश्वास न रखना, आदि मिथ्या विश्वासों में पुनः फंस गये। मनोविज्ञान के अनुसार विचार करें तो ऐसा प्रायः हुआ करता है कि एक व्यक्ति ज्ञान व विद्या को जानकर भी अपना अविद्यायुक्त आचरण नहीं छोड़ता। आजकल तो यह बात वेदतर सभी मतों पर लागू होती है। ऐसा शायद एक भी मत भूतल पर नहीं है जहां उन मतों के आचार्य व अनुयायी समय समय पर अपनी अविद्यायुक्त मान्यताओं की परीक्षा व समीक्षा कर उन्हें सत्य सिद्ध करने का विचार भी रखते हों। अन्धविश्वास व अविद्या युक्त आस्था ही सब मतों में प्रबल रूप से दिखाई दे रही है। इसी के विरुद्ध महर्षि दयानन्द ने संघर्ष व आन्दोलन किया था। आज तो यह सिद्धान्त, मत व विधान ही बना दिया गया है कि यदि कोई असत्य मत वा मान्यताओं को मानता है तो किसी को उससे सत्य का आग्रह करने का अधिकार नहीं है। टीवी चैनलों पर प्रायः इसकी चर्चा देखते ही रहते हैं जो अविद्या का प्रचार व प्रसार करते हैं। यही कारण है कि भिन्न भिन्न मतों के आचार्य सुख व आनन्द भोग रहे हैं तथा वह व उनके अनुयायी अपनी अपनी जीवात्माओं की उन्नति व धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष से वंचित होकर, वैदिक धर्म व ऋषि दयानन्द के अनुसार, जन्म जन्मान्तर में दुःख के भागी बन रहे हैं। संसार में वर्तमान समय में जो दुःख व अशान्ति व्याप्त है वह भी संसार में प्रचलित अवैदिक मतों के कारण ही है। सच्चे व ऋषि दयानन्द द्वारा प्रचारित वैदिक मत की स्थापना से ही विश्व में सुख व शान्ति का साम्राज्य स्थापित हो सकता है। भविष्य में ऐसा होगा या नहीं, यह भविष्य में छुपा हुआ है। यह संसार ईश्वर का बनाया हुआ है। वही इसका स्वामी है। सज्जन पुरुषों का काम तो सत्य मत का निश्चय कर उसका पालन व प्रचार करना होता है। यह कार्य स्वामी शंकराचार्य जी, उनके बाद स्वामी दयानन्द सरस्वती जी एवं उनके अनुयायियों ने किया व वर्तमान में भी कर रहे हैं। आज वैदिक मत को अधिक प्रभावशाली रूप में प्रचारित करने की आवश्यकता है। निश्चय ही मत मतान्तरों के आचार्य इसका विरोध करेंगे व अपने अनुयायियों से करायेंगे। हिंसा भी होगी। परन्तु विश्व शान्ति और मानव हित में वैदिक धर्म का प्रचार व प्रसार आवश्यक है। यही कार्य स्वामी शंकराचार्य और स्वामी दयानन्द को देश व संसार के सच्चे धार्मिक लोगों की श्रद्धांजलि हो सकती है।

आज कल की संस्कृति भोग प्रधान है। भोगी रोगी बन जाता है और उसका विनाश होता है, यह सन्देश हमें सदैव स्मरण रखना चाहिये। यह भी लिख दें कि लोग अपने मतों के बारे में कुछ भी कहें व माने, परन्तु यह निश्चित है कि मनुष्य अल्पज्ञ होता है, उनमें कम व अधिक अविद्या विद्यमान होती है। अतः मध्यकाल, जो कि सर्वाधिक अविद्या का काल था, ऐसे समय में अस्तित्व में आये मतों का अविद्याग्रस्त होना स्वाभाविक है। इसका उपाय वही है जो महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश में दिया है। उसके अनुसार **‘स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश’** की प्रतिष्ठा ही विश्व को सुख व शान्ति दे सकती है।

स्वामी शंकराचार्य जी और स्वामी दयानन्द जी के विषय में हमें यह समानता परिलक्षित होती है कि दोनों ही वैदिक सनातन धर्म के पुनरुधारक व प्रचारक थे और दोनों की मृत्यु का कारण उनके विरोधियों द्वारा षडयन्त्रपूर्वक विषपान द्वारा हत्या करके किया गया। अविद्या के अनेक परिणामों में निर्दयता व हिंसा भी सम्मिलित है जिसे आज सारा संसार देख रहा है। एक सामान्य आस्तिक मनुष्य इस साम्प्रदायिक व मत के आग्रह में निहित हिंसा का दमन नहीं कर सकता। इसी लिए वह ईश्वर से प्रार्थना करता है कि हे ईश्वर आप इन मतवादी लोगों के हृदय से अविद्यरा दूर कर उनमें विद्या का प्रकाश करें जिससे वह वेदमत को अपनाकर अपना व संसार का हित करने में सहायक हो सके। इसी के साथ इस लेख को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**